इस छत के नीचे

कहानी / शरोवन'

***

‘‘चोरी चाहे एक पैसे की हो और चाहे एक लाख की। चोरी, चोरी होती है। यह एक पाप है। मैं यह नहीं कहता हूं कि सब दूध के धुले हुये हैं, लेकिन जब यही सब करना था, पैसा ही कमाना था, झूठ ही बोलना था, चोरी ही करनी थी, तो कोई भी दूकान खोल लेते? और भी बड़े स्तर पर करना था तो कोई भी मिल खोल लेते? व्हाई दी मिनिस्टरी? (मसीही सेवा का काम ही क्यों)। देखो, यह जो कुछ भी हम दोनों के बीच में चल रहा है, उसका अंजाम मुझे नज़र आने लगा है। अगर ऐसा ही रहा तो हम दोनों इस छत के नीचे नहीं रह सकते हैं। तुम कहीं भी जाओ, कुछ भी करो, जैसे भी चाहो, अपनी तरह से रहने के लिये, अपनी जिन्दगी अपनी तरह से व्यतीत करने के लिये मेरी तरफ से आज़ाद हो। जब चाहे तब जा सकती हो, मगर यह घर छोड़ने से पहले कोई भी तमाशा मत करना।’’

***

झील के थिरकते हुये जल में जब सूर्य की अंतिम किरण भी अपनी लालिमा घोलकर समाप्त हो गई तो इसके साथ ही ढलती हुई संध्या भी अंधकार की चादर में सिमटने लगी। झील के दूसरे तट पर शहर की तरफ जाती हुई सड़क पर यातायात अब काफी बढ़ चुका था। मोटर गाड़ियों के साथ-साथ पैदल और सायकिलों के द्वारा अपने ठिकानों पर भागते हुये लोगों के कारण यातायात का शोर था। आकाश में पक्षियों की कतारें भाग रही थीं। हर किसी को अपने घर पहुंचने की जल्दी थी, परन्तु अपने ही विचारों में उलझे, बैठे हुये नीमेश को इन सब बातों का कुछ भी होश

नहीं था। वैसे भी जब मनुष्य अपनी सोचों में तल्लीन होता है तो उसे फिर किसी भी बात का तनिक भी ख्याल नहीं रहता है। झील के किनारे सरकार के द्वारा बनाये हुये पार्क की बत्तियां भी जल चुकी थीं, और डूबी हुई संध्या में अपने प्यार की झूठी-सच्ची कसमें खाने के लिये युगल आने भी लगे थे। मगर इन सब बातों से कहीं बहुत दूर नीमेश अपने में ही उलझा हुआ था। एक बार को नीमेश ने पहले तो अपने आस-पास फिर दूर तक देखा। फिर बाद में उसने जेब से आई फोन निकाला और उसमें आये हुये मेसेज़ को फिर एक बार खोल लिया।

'नीमेश,

मैं तुम्हें यह दुखभरी खबर देना तो नहीं चाहती थी, पर बताना भी मेरा फर्ज था। पिछले सप्ताह नवंबर 12 की शाम को नीमा ने बिशप डिमारकस के लड़के से अपना बाकायदा विवाह कर लिया है। अब तुम अपने को संभालना और कोई भी ऐसा-वैसा काम भावुकता में नहीं कर बैठना कि मैं सारी .जिन्दगी अपने को ही कोसती रहूं। अपने लिये न सही, पर कम से कम मेरी ख़ातिर तो अपना ख्याल रखना ही। डयूटी से छूटते ही मैं तुम्हारे पास जरूर ही आऊंगी।

कजली।'

नीमेश ने पढ़ा तो एक बार फिर से अपना दिल मसोसकर ही रह गया। नीमा उसकी पत्नी थी, और जिससे पिछले पांच सालों से उसके संबन्ध विच्छेद थे। दोनों पति और पत्नी आपसी मन मुटावों, तकरार और विचारों में मेल न खाने के कारण वर्षों से अलग तो रह रहे थे, लेकिन बाकायदा तलाक नहीं ले सके थे। अपने जीवन की पिछले पांच सालों की विवाहित बल्कि थकी हुई अतीत की यादों में सहसा ही नीमेश को ख्याल आया उस दिन और मनोरम डूबती हुई वर्षा में भीगी हुई संध्या का जब 24 दिसंबर को वह कम्पाऊंड की बाहरी दीवार से अपने दोनों हाथ टिकाये दूर ईंट के भट्टे से निकलते हुये धुयें को यूं ही बेमतलब निहार रहा था। तभी नीमा ना जाने कब से उसके पीछे आकर खड़ी हो चुकी थी और चाहती थी कि नीमेश खुद ही उसके आने की उपस्थिति को महसूस करे और उससे बातों की पहल करे। फिर जब काफी देर हो गई और नीमेश को उसकी उपस्थिति का जब कोई भी एहसास नहीं हो सका तो नीमा से नहीं रहा गया। उसने धीरे से उसके कंधे पर अपना कोमल हाथ रख दिया। रख दिया तो नीमेश अपने ख्यालों से चौंककर हटा और उसने पीछे मुड़कर देखा। वह कुछ कहता, इससे पहले ही नीमा उससे शिकायत भरे स्वरों में बोली,

‘कैसे निष्ठुर इंसान हो तुम? इतनी देर से तुम्हारे पीछे खड़ी हूं, और तुमने देखा भी नहीं?’

‘?’

नीमेश, नीमा को देखकर चौंका तो, पर आश्चर्य नहीं कर सका। कारण था कि नीमा जब देखो तब ही अवसर पाते ही उसके पास कभी बताकर तो कभी बगैर बताये आकर खड़ी हो जाती थी।

‘मेरे बजूद की एक परछाई के पीछे तुम भाग रही हो, क्या मिल जायेगा तुमको मुझसे?’ नीमेश ने नीमा को देखते हुये कहा।

‘अब यह भी खुलकर बताना पड़ेगा क्या? तुम इतने बुद्धू तो नहीं हो जो कुछ समझते नहीं हो?’

‘?’

नीमेश जब कुछ भी नहीं बोला तो नीमा ने स्पष्ट किया। वह बोली,

‘मुझे तुम मिल जाओगे। बस और क्या चाहिये मुझे?’

‘मैं बहुत ही गरीब आदमी हूं। एक कारगुज़ार का लड़का हूं, और तुम एक बड़े सम्मानित, कोठी में रहने वाले परिवार की राजकुमारी। मुझ पर रहम करो।’

‘तुम जब देखो तब ही यही छोटे बड़े की बात करते रहते हो? मनुष्य पैंसों से नहीं बल्कि अपने कामों से बड़ा बनता है। डिग्री कक्षा में पढ़ते हो और दकियानूसी जैसी बातें किया करते हो?’

‘!’

नीमा की बात सुनकर नीमेश फिर से चुप हो गया तो नीमा ने ही बात आगे बढ़ाई। वह बोली,

‘अच्छा, अब छोड़ो इन बातों को। बड़े दिन की रात है। चर्च को सजाने और मोमबत्तियां लगाने जरूर आना। मुझे तुमको बुलाने न आना पड़े। तब वहीं बैठकर खूब ढेर सारी बातें करेंगे।’ कहकर नीमा चली गई।

नीमा और नीमेश का साथ बचपन से ही बना रहा था। उन दिनों से जब कि दोनों ने एक साथ प्राईमरी स्कूल में एक साथ, एक ही कक्षा से साथ पढ़ना आरंभ किया था। फिर धीरे-धीरे दोनों का यह साथ हाई स्कूल की परीक्षा तक चला। हाई स्कूल के बाद दोनों के कॉलेज बदले मगर दोनों

का एक साथ कॉलेज जाना नहीं छूटा। दोनों साथ जाते, साथ में दोनों घर वापस आते। फिर भी इस साथ ने चाहे एक बार को नीमेश के दिल पर कोई प्रभाव नहीं छोड़ा हो, मगर नीमा के दिल-ओ-दिमाग में जरूर ही हलचल मचाना आरंभ कर दिया था। इसे चाहे परिस्थितियों का तकाज़ा कहिये या फिर हालात का इनाम; दोनों के साथ-साथ बचपन से ही खेलते, पढ़ते और जीवन के लगभग बारह साल एक साथ हंसते व्यतीत करते हुये जो परिणाम सामने आना था, उसका रूप कुछ ऐसा ही होना था। नीमा नीमेश को मन ही मन चाहने और पसंद करने लगी। इतना ही नहीं वह नीमेश पर अपना एक छत्र अधिकार भी समझने लगी। पर हां, नीमेश के मुख से भी उसके लिये हां निकले, वह भी इस चाहत में अपनी सहमति दे, उस दिन का नीमा चुपचाप इंतज़ार करने लगी।

लेकिन नीमा कब तक इस बात का इंतज़ार करती। कब तक वह सब्र का घूंट पीती रहती, एक दिन नीमा ने नीमेश से बातों ही बातों में पूछ भी लिया। भीषण गर्मी के दिन थे। गर्म हवाओं की लू ने लोगों का दिन में बाहर निकलना तक बंद कर दिया था। ऐसे में जब भी बिजली चली जाती थी तो सारे कंपाऊंड के लोग अपने घरों से निकलकर बाहर वृक्षों के नीचे आकर अपना पसीना सुखाने के लिये बैठ जाते थे। ऐसे में ही एक दिन नीमेश बाहर नीम के नीचे अपनी चारपाई डालकर बैठा हुआ कोई पत्रिका पढ़ रहा था। तभी नीमा भी अपने घर से बाहर निकली और नीमेश के पास आकर उसकी चारपाई पर बैठ गई। बैठते ही उसने नीमेश से शिकायत सी की। बोली,

'नीमेश, तुम हो तो बहुत ही छिपे हुये रुस्तम, मुझे बताया तक नहीं?'

'क्या मतलब?' नीमेश अपने स्थान से उठा और फिर नीमा के चेहरे को एक संशय से देखता हुआ फिर से अपनी जगह पर बैठ गया। तभी नीमा ने आगे कहा कि,

'तुम लिखते भी हो, और मुझे हवा तक नहीं लगने दी?'

'मैं कुछ समझा नहीं?' नीमेश बोला।

'मैं समझाती हूं। मैंने तुम्हारी कहानी 'तू आबाद रहे' पत्रिका में पढ़ी है। चलो मुझे अपने लिखने के बारे में मुझसे छिपा लिया, कोई बात नहीं, लेकिन ऐसी सीरियस, दुखभरी कहानी कैसे लिख ली? क्या हो गया है तुम्हारे साथ? किसने छल लिया है तुम्हें?'

‘वह तो एक कहानी भर है।’ नीमेश ने कहा।

‘कहानी भर नहीं है। मुझे तो तुम्हारी अपनी सच्ची आप बीती सी लगती है?’

‘?’

नीमेश से आगे कुछ भी कहते नहीं बन पड़ा। वह चुप हो गया तो नीमा ने आगे उससे कहा। वह बोली,

‘तुम क्या सोचते हो कि तुम्हें कोई पसंद नहीं करता? कोई लड़की तुम्हें प्यार नहीं करती? ज़रा मेरी आंखों में देखो तो। जब भी देखोगे तो सदा तुमको अपनी तस्वीर ही नज़र आयेगी।’

उस दिन की नीमा की इस बात ने नीमेश को एहसास करा दिया कि वह उसे केवल पसंद ही नहीं करती है बल्कि उसके साथ रह कर अपना जीवन व्यतीत करने के सपने भी देखने लगी है। इस घटना के बाद दिन और बढ़े। मौसम बदले। साल गुज़रे। नीमेश एक सरकारी नौकरी करने लगा। फिर एक दिन नीमा ने अपने घर में स्पष्ट कर दिया कि वह नीमेश से अपना विवाह करना चाहती है। शायद नीमा के माता-पिता एक अच्छे विचारों के इंसान थे, आर्थिक, ओहदे और तमाम तरह के रहन सहन में ज़मीन और आसमान की खासी दूरियां होने के पश्चात भी उन्होंने नीमा और नीमेश के विवाह की अनुमति दे दी। तब एक दिन दोनों का बड़ी धूमधाम के साथ विवाह हुआ। विवाह के पश्चात नीमा नीमेश के साथ, भरतपुर चली आई, जहां पर नीमेश रहकर अपनी नौकरी करता था।

विवाह के आरंभ के डेढ़ साल दोनों के बड़े ही अच्छे व्यतीत हुये। नीमेश अपनी सरकारी नौकरी में एक लिपिक था, लेकिन वह अपना घर बड़े ही अच्छे ढंग से चला रहा था। उसका साथ देने के लिये नीमा भी एक स्कूल में पढ़ाने लगी थी। फिर एक दिन नीमेश ने हिन्दी में अपनी व्यक्तिगत् तौर पर स्नातकोत्तर की परीक्षा भी पास कर ली। लेकिन परीक्षा क्या पास की कि यहीं से नीमेश के वैवाहिक जीवन पर बुरे दिनों के काले बादल मंडलाने लगे। एक दिन नीमा ने नीमेश को सलाह दी। वह बोली,

‘पापा कह रहे थे कि आपने हिन्दी की स्नातकोत्तर परीक्षा पास कर ली है, सो आप मिशन स्कूल में व्याख्याता के पद के लिये अपना प्रार्थनापत्र दे दें। वे आपको वहां लगवा देगें। बाद में वे आपको वहां का प्राधानाचार्य भी बनवा देगें।’

‘?’

अपनी पत्नी के मुख से ऐसी बात सुनकर नीमेश के कान अचानक ही खटक गये। उसने केवल इतना ही कहा कि,

‘प्रोमोशन तो मेरा अपनी इस नौकरी में भी हो जायेगा। मैं एक दिन बड़ा बाबू बन जाऊंगा।’

‘लेकिन बहुत अंतर है एक बड़ा बाबू और कॉलेज का प्राधानाचार्य में।’ नीमा ने तर्क किया।

‘तो ठीक है। मैं सोचूंगा।’ कहकर नीमेश ने फिलहाल बात टाल दी।

लेकिन फिर भी बात टली नहीं। नीमेश के मन में न तो ऐसी बात कभी भी आई थी और ना ही वह कभी भी करना चाहता था। उसने एक बार को इस बारे में सोचना ही बंद कर दिया। परन्तु नीमा अपने को रोक नहीं सकी। उसके दिल में तो जैसे अरमानों की चिता सुलग चुकी थी। इस प्रकार कि वह भी अब कार, कोठी और बंगले में रहने के सपने देखने लगी थी। सचमुच में ऐसा सोचने और सपने देखने में उसको भी कोई दोष नहीं दिया जा सकता था। जिस माहौल और ठाठबाट में उसने अपना बचपन व्यतीत किया था, उस वैभवता पर उसके प्यार की भावुकता ने वक्ती तौर पर मोम की चादर तो बिछा दी थी, मगर जब यही मोम की चादर हकीकत का दामन पिघलाकर सामने आई तो उसे महसूस हुआ प्यार की सारी की सारी भावनाओं को गूंथकर दो वक्त चैन की रोटी भी खाना मुश्किल हो जायेगी। खुद्दारी और उसूल एक अच्छी बात होती है, पर जिंन्दगी की गाड़ी घसीटने के लिये नीमेश को अपने उसूल बदलने होंगे। नीमा के सामने अपना सारा भावी जीवन सामने था तो नीमेश के आगे उसके उसूल और उसके इरादे। एक दिन नीमा ने नीमेश के सामने फिर से अपने पापा की बात दोहरा दी। वह बोली,

‘आपने कुछ सोचा मेरे पापा की बात पर?’

‘हां सोचा था।’ नीमेश ने निर्लिप्त भाव से उत्तर दिया।

‘क्या सोचा था?’

‘मैं वह सब नहीं कर सकता, जो तुम्हारे पापा चाहते हैं। मैं जैसा भी हूं, जहां भी हूं, सन्तुष्ट हूं। मेहनत से दो रोटी कमाता हूं। किसी से भीख नहीं मांगता, चोरी नहीं करता।’

‘इसका मतलब है कि मेरे परिवार वाले जो भी हैं वे ज्यादातर मिशन में ही काम करते हैं, और इस प्रकार से वे सब आपकी दृष्टि में चोर और बेईमान हैं?’

‘यह सब तुम मुझसे क्यों पूछती हो? बाहर सारे समाज में झांककर देखो, लोगों के नज़रिये जानोगी तो हकीकत खुद ब खुद तुम्हारे सामने आ जायेगी।’

‘मेरी समझ में यह नहीं आता कि आखिर तुम्हें परेशानी ही क्या है? अपनी हरिश्चन्द्र जैसी आदत को तो आप मिशन की नौकरी में रहकर भी कायम रख सकते हो। क्या कभी सोचा है कि आगे आनेवाले दिनों में हमारा अपना परिवार बढ़ेगा, बच्चे होंगे, उनका पालन-पोषण, उनका सारा भविष्य हमारे सामने पड़ा हुआ है।’

‘है, परेशानी। मिशन में चला गया तो हर वह बात मुझे माननी पड़ेगी जो तुम चाहोगी और तुम्हारे पापा चाहेंगे।’

‘तो इसमें बुराई ही क्या है? हर जगह, हरेक विभाग में, चाहे वह सरकारी हो या फिर गैर सरकारी, थोड़ा बहुत तो ऊपर नीचे चल ही जाता है।’ नीमा ने कहा तो नीमेश जैसे अन्दर ही अन्दर भभक गया। वह उसके पास आया, और उसके पास करीब बैठकर बोला,

‘देखो नीमा, चोरी चाहे एक पैसे की हो और चाहे एक लाख की। चोरी, चोरी होती है। यह एक पाप है। मैं यह नहीं कहता हूं कि सब दूध के धुले हुये हैं, लेकिन जब यही सब करना था, पैसा ही कमाना था, झूठ ही बोलना था, चोरी ही करनी थी, तो कोई भी दूकान खोल लेते? और भी बड़े स्तर पर करना था तो कोई भी मिल खोल लेते? व्हाई दी मिनिस्टरी? (मसीही सेवा का काम ही क्यों)। देखो, यह जो कुछ भी हम दोनों के बीच में चल रहा है, उसका अंजाम मुझे नज़र आने लगा है। अगर ऐसा ही रहा तो हम दोनों ‘इस छत के नीचे’ नहीं रह सकते हैं। तुम कहीं भी जाओ, कुछ भी करो, जैसे भी चाहो, अपनी तरह से रहने के लिये, अपनी .जिन्दगी अपनी तरह से व्यतीत करने के लिये मेरी तरफ से आज़ाद हो। जब चाहे तब जा सकती हो, मगर यह घर छोड़ने से पहले कोई भी तमाशा मत करना।’’

उस दिन के बाद से दोनों के दिन आपस की चुप्पी, तनाव, आपसी मनमुटाव और इसी खींचातानी में ऐसे व्यतीत हुये कि दोनों को अपना घर खाने को दौड़ता प्रतीत होने लगा। फिर ऐसे हालात में जब नीमेश एक दिन शाम को काम से वापस आया तो नीमा एक छोटा सा पुर्जा कागज का छोड़कर अपने पिता के घर जा चुकी थी। बाद में नीमा कभी भी वापस नहीं आई और ना ही नीमेश कभी भी उसे लेने गया। इस तरह होते होते जीवन के पांच साल गुज़र गये। फिर पिछले दो हफ्ते पहले जब नीमेश को नीमा की तरफ से तलाक के कागज़ डाक में मिले थे तो वह उन्हें देखते ही समझ गया था कि अब वक्त आ गया है उसके प्यार की तबाही का। उसने चुपचाप कागज़ों पर दस्तखत किये और वापस डाक से भेज दिये थे।

शाम गहरा गई थी। आकाश में दूर क्षितिज के एक किनारे से, वृक्षों की घनी पत्तियों के पीछे से चन्द्रमा की किरणें जाली बुनने लगी थीं। नीमेश के दिल के उलझे हुये हालात के समान ही झील के गर्भ में पार्क में चमकती हुई विद्युत बत्तियों के प्रतिबिंब धीरे-धीरे कांप रहे थे। सही शाम के ढलने से पहले आया हुआ नीमेश अब तक अपने जीवन की उन बीती हुई कसैली यादों को फिर एक बार बैठे बैठे दोहरा गया था, जो कभी उसके जीवन में खुशियों की बहार बनकर आईं थीं और सदा के लिये किसी मरूस्थल के सूखे और प्यासे पेड़ बनकर लौट भी गई थीं।

‘तुम यहां बैठे हुये हो, और मैं तुम्हें न जाने कहां कहां ढूंढती फिर रही थी?’ अचानक ही नीमेश के कानों में कजली का स्वर सुनाई दिया तो वह अपनी सोचों और विचारों से बाहर आया। एक नज़र उसने कजली को देखा और फिर से झील के थिरकते पानी को निहारने लगा।

‘अब क्या सारी रात ही यहीं बैठने का इरादा है? चलो, कहीं चलकर शाम का खाना खाते हैं, फिर मैं तुम्हें घर छोड़ आऊंगी।’

‘?’

नीमेश ने कहा तो कुछ नहीं। वह चुपचाप उठा और कजली के साथ चल दिया। चल दिया तो कजली ने भी नीमेश का हाथ थाम लिया। कौन जानता था कि किसी की जली हुई ज़िन्दगी को फिर से शुरू करने की आस में या फिर दुख बांटने के ख्याल से? कजली जानती थी कि, नीमेश और नीमा, दोनों ही ने एक-दूसरे को खो दिया था। एक ने महत्वाकांक्षी बनने के लालच में तो दूसरे ने अपने उसूलों के कारण।

समाप्त.